औरंगजेब और राठौड़ संघर्ष

Dr. Manish Shrimali

Assistant Professor

Mohan Lal Sukhadia University

Udaipur

manishmlsu@gmail.com

Dr. Manish Shrimali

प्रारंभिक मुगल शासकों की राजपूत नीति

राजपूतों से अकबर के संबंधों को देश के सशक्त राजाओं तथा जमीदारों के प्रति मुगलों की नीति के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। भारत में तुर्की शासन की स्थापना के पश्चात वंशानुगत स्थानीय सरदार, जो अधिकांशत हिंदू थे, विभिन्न स्तरों पर हिंदू राजनीतिक सत्ता एवं भू राजस्व के रूप में ग्रहण किए जाने वाले कृषि उत्पादन-अतिरेक के हकदार थे। शाही राज्य अधिकारियों तथा जमीदारों के बीच प्रशासनिक सत्ता के विच्छेद तथा उनके द्वारा अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र निर्धारित करने की चेष्टा के कारण तनाव उत्पन्न होता था जिसको धार्मिक रंग दे दिया जाता था। ऐसा विशेषत उन क्षेत्रों में घटित होता था जहां स्थानीय सरकार गैर मुस्लिम व प्रभावशाली जाति के होते थे। इन तनाव के कारण विवाद और लड़ाई की स्थिति आती रहती थी तथा इन्हें भूल जाने के लिए समय - समय पर प्रशासन को अधिकारियों की स्थिति में वास्तविक परिवर्तन करने होते थे। इक्तिदार आलम खान का मानना है की अकबर ने इन स्थानीय जमीदारों व विशेष रुप से राजपूत राजाओं से जो समझौता किया उसका इसी संदर्भ में अध्ययन किया जाना चाहिए। राजपूतों का सहयोग अकबर के लिए मुगल सत्ता के विदेशी रंग को धूमिल बनाने तथा जैसा कि अवध बिहारी पांडे का कहना है, राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान करने में सहायक सिद्ध होता,जिसके कारण उसको जन समर्थन मिलता तथा उसके राज वंश की जड़े भी मजबूत होती। अतहर अली उनका मानना है कि अकबर के काल के पश्चात से मुगल साम्राज्य विभिन्न प्रशासनिक गुटों के समन्वित प्रयासों से विकसित हुआ। इसमें राजपूतों तथा अन्य सरदारों एवं जमीदारों के हितों के कुल लाभांश के लगभग एक तिहाई हिस्से की भागीदारी थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राजपूतों के सक्रिय एवं चातुर्यपूर्ण सहयोग के बिना राजनीतिक तथा सामाजिक समन्वय संभव नहीं था।

मुगल साम्राज्य में अकबर का पहला व्यक्ति था जिसने साम्राज्य निर्माण में राजपूतों के महत्व को समझा। अकबर की यह नीति समन्वय एवं सौहार्द के साथ राजनीतिक लाभ से प्रेरित थी। अकबर के नवीन साम्राज्य के समक्ष तीन प्रमुख समस्या थी- पहली मुगलों की सत्ता को अफगानों द्वारा प्रस्तुत चुनौती का अंत करना, दूसरी मुगल साम्राज्य का विस्तार, तीसरी भारत की बहुसंख्यक हिंदू प्रजा के बीच मुगल शासन को लोकप्रिय बनाना। इन तीनों लक्ष्य की प्राप्ति के लिए राजपूतों का सहयोग महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता था। राजपूतों की सहायता से अफगानों की चुनौती का दमन

Dr. Manish Shrimali

किया जा सकता था। मुगलों और राजपूतों की मिली जुली शक्ति का सामना करना अफगानों के लिए कठिन था। राजपूताना सामरिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण था और मुगलों का यहां अपनी सत्ता स्थापित किए बिना पश्चिम एवं दक्षिण की ओर साम्राज्य विस्तार संभव नहीं था। क्योंकि राजपूत भारत के शासक वर्ग के रूप में थे इसलिए उनका सहयोग प्राप्त कर बाकी शेष हिंदू प्रजा का भी सहयोग आसानी से प्राप्त किया जा सकता था। इन परिस्थितियों को समझते हुए अकबर ने राजपूतों के प्रति एक नई नीति का अनुसरण करना उचित समझा। इस नीति का प्रारंभ 1563 ई. में आमेर के शासक राजा भारमल की पुत्री के विवाह के साथ हुआ। अकबर ने वैवाहिक संबंधों के माध्यम से राजपूत आदि घरानों से मजबूत गठजोड़ स्थापित किया। जो राजपूत राजवंश मुगल सेवा में सम्मिलित हुए उन्हें अकबर ने कई प्रकार की सुविधाएं दी उदाहरण के लिए केवल राजपूत मनसबदार को ही अधिकार प्राप्त था कि वह अपनी इच्छा से चुने हुए राजपूत सैनिकों को ही अपने अधीन सेवा में रखें। जागीर के रूप में वंशानुगत भूमि अनुदान केवल उन्हें ही प्राप्त था। राजपूतों को साम्राज्य के बड़े-बड़े पदों पर भी प्रतिनिधित्व मिला और अकबर के शासन काल में राजा मानसिंह और राजा भगवानदास ऐसे राजपूत सरदार थे जो मुगल दरबार में अत्यधिक प्रभावशाली एवं महत्वपूर्ण थे। राजपूतों के माध्यम से अकबर भारत में मुगल साम्राज्य को एक सुदृढ़ आधार प्राप्त करने में सफल रहा।

अकबर द्वारा प्रारंभ की गई राजपूत नीति कुछ हद तक जहांगीर के शासनकाल में जारी रही किंतु इसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन शाहजहां के शासनकाल से दिखाई पड़ता है। शाहजहां के शासनकाल में परिस्थितियां बदली वैवाहिक संबंधों को अब विशेष महत्त्व नहीं दिया जाने लगा तथा बड़े पदों पर भी राजपूतों की नियुक्ति में कमी आई। उदाहरण के लिए किसी बड़े प्रांत के सूबेदार के रूप में इस काल में राजपूतों की नियुक्ति नहीं हुई।

औरंगजेब की राजपूतों के प्रति नीति

जहां तक औरंगजेब के राजपूतों के साथ संबंधों की बात है तो यह अलग-अलग दौर में अलग-अलग रूप में सामने आते हैं। 1658 से लेकर 1667 में जय सिंह की मृत्यु तक राजपूत राजाओं के साथ औरंगजेब के संबंध मधुर थे। इस चरण में राजपूतों को राज्य का सहयोगी समझा

Dr. Manish Shrimali

जाता था और जहांगीर तथा शाहजहां के शासनकाल की अपेक्षा इन्हें अधिक सम्मान मिला था। औरंगजेब का जयसिंह से इतना घनिष्ठ संबंध था कि समकालीन इतिहासकार ईश्वरदास उसे औरंगजेब के अक्ल के ताले की चाबी कहता है। चूंकि औरंगजेब के मारवाड़ और मेवाड़ दो प्रमुख रियासतों से विवाद बना रहा। सर यदुनाथ सरकार के अनुसार यह औरंगजेब की संकट धार्मिक नीति के फल स्वरुप उसके और राजपूतों के बीच बढ़ती दूरी का परिणाम था। यदुनाथ सरकार की राय में औरंगजेब मारवाड़ को साम्राज्य में मिलाना या कमजोर करना चाहता था, क्योंकि हिंदुओं के बलात धर्मांतरण की उसकी योजना का तकाजा था कि जसवंत सिंह की रियासत एक निष्क्रिय और पराधीन प्रदेश की स्थिति में आ जाए या साम्राज्य का एक नियमित प्रदेश बन जाए। यद्यपि यदुनाथ सरकार के मत के विरोध में इतिहासकारों ने लिखा है किंतु सतीश चंद्र इस संदर्भ में दो महत्वपूर्ण समकालीन कृति वका-अजमेर तथा जोधपुर हुकूमत-रि-बही का उल्लेख किया है जो औरंगजेब एवं राठौड़ संघर्ष के संदर्भ में महत्वपूर्ण जानकारी देती है।

राठौड़ विद्रोह के कारण

यहां पर यह देखना महत्वपूर्ण है की 1679 ईसवी में राठौड़ विद्रोह में कौन- से कारण उत्तरदायी थे । प्रसिद्ध इतिहासकार अतहर अली का मानना है की राठौर एवं सिसोदिया राजपूतों के विद्रोह को संपूर्ण राजपूताना का सूचक नहीं माना जा सकता क्योंकि कछवाहा, हाड़ा, भाटी तथा बीकानेर के राठौड़ यह मेवाड़ तथा मारवाड़ के राजवंशों कितने शक्तिशाली नहीं थे किंतु फिर भी मुगलों के प्रति निष्ठावान बने रहे।

1678 ईसवी में जसवंत सिंह की मृत्यु के पश्चात मारवाड़ में जो अधिकारी की समस्या उत्पन्न हुई उसके संदर्भ में निम्न दो तर्क बड़े महत्वपूर्ण थे -

पहला- जसवंत सिंह का कोई बेटा नहीं था।

दूसरा- जसवंत सिंह के ऊपर शाही खजाने का भारी कर्जा था। अजमेर की सूबेदार इफ्तिखार ने सेना को 1679 ईस्वी में जसवंत सिंह की संपूर्ण संपत्ति को राज्य के अधीन करने की आज्ञा दी। इसी बीच औरंगजेब ने निर्णय लिया कि फिलहाल दो परगनों के अलावा राजधानी जोधपुर समेत सारा

Dr. Manish Shrimali

मारवाड़ खालसा में शामिल कर लिया जाए। जब यह आदेश कार्यान्वित करने के निर्देश दिए गए तब राठौड़ों ने इसे अपनी प्रतिष्ठा का अपमान समझा तथा सूबेदार से कड़ा कदम न उठाने की प्रार्थना की। राठौड़ संपूर्ण मारवाड़ के बदले केवल राजधानी पर अपना अधिकार चाहते थे किंतु सूबेदार ने जोधपुर को खालीसा में शामिल किए जाने की शाही आज्ञा को इसी आधार पर उपयुक्त बताया कि नियमानुसार वतन जागीर को किसी स्त्री या सेवक को प्रदान नहीं किया जा सकता। राठौड़ों की तरफ से हो रहे विरोध को देखते हुए औरंगजेब ने उन में मतभेद उत्पन्न करने का प्रयास किया और एक फरमान जारी किया जिसका उद्देश्य राठौड़ों में फूट डालना था। वकाये-अजमेर से ज्ञात होता है कि इस फरमान के अनुसार सभी अधिकारी उस पट्टे पर अधिकार रख सकते थे जो उन्हें जसवंत सिंह द्वारा प्रदान किया गया था। इस प्रकार औरंगजेब ने उनकी जागीरो को विधिवत रूप से मान्यता दी तथा उसके एवज में वह शाही दरबार में उसी स्तर का मनसब प्राप्त कर सकते थे। किंतु राठौड़ों ने औरंगजेब की इस चाल को पहचान लिया और उन्होंने सत्ता का उल्लंघन करने का निर्णय लिया।

इसी दौरान एक महत्वपूर्ण घटना घटित हुई अप्रैल 1679 में जसवंत सिंह की दो रानियों ने दो पुत्रों को जन्म दिया। अब मारवाड़ के पास उत्तराधिकारी नहीं होने की कोई समस्या नहीं थी। अजीत सिंह के रूप में मारवाड़ को उत्तराधिकारी मिला किंतु दुर्भाग्य से दूसरे बच्चे कि कुछ समय बाद ही मृत्यु हो गई। औरंगजेब ने अजीत सिंह को मान्यता प्रदान की तथा पोकरण का किला जो रावल अमर सिंह को अनुदान के रूप में प्रदान किया गया था बादशाह द्वारा वापस ले लिया गया। किंतु औरंगजेब की नीति में विरोधाभास उस समय दिखाई देता है जब वह इंद्र सिंह को 36 लाख रुपए के बदले उसे जोधपुर का टीका प्रदान कर देता है। इंद्र सिंह जसवंत सिंह के बड़े भाई अमर सिंह का पुत्र था। इंदर सिंह के शासक बनाने का सभी राठौड़ सरदारों ने विरोध किया। 1679 जून में शाही वाकया नवीस की रिपोर्ट में लिखा है की राजपूतों के विद्रोह का मूल कारण इंदर सिंह है क्योंकि वह मारवाड़ में अत्यंत अ-लोकप्रिय और उसको कोई पसंद नहीं करता है। इस समय दुर्गादास राठौड़ ने अजीत सिंह को शासक बनाने का प्रस्ताव रखा किंतु औरंगजेब ने अजीत सिंह की प्रामाणिकता पर ही प्रश्नचिन्ह खड़ा कर दिया तथा उसने नकली अजीत सिंह को असली के रूप में मान्यता दी। उपर्युक्त कारणों से दोनों किसी समझौते तक नहीं पहुंच सके।

Dr. Manish Shrimali

औरंगजेब राठौड़ संघर्ष के कारणों के संदर्भ में यदुनाथ सरकार का मानना है कि जसवंत सिंह के कोई बेटा नहीं था, अगर औरंगजेब चाहता तो वह इंदर सिंह जो कि एक निष्ठावान दरबारी था उसे तुरंत ही मान्यता दे सकता था। औरंगजेब ने ऐसा नहीं किया था इसका अर्थ यही था कि वह मारवाड़ को नष्ट करना चाहता था। इतिहासकार अतहर अली सरकार के उपयुक्त कथन का विरोध करते हैं उनके अनुसार 5 महीने तक जब इंदर सिंह को नियुक्त नहीं किया गया उसका कारण यह था कि राठौड़ सरदार इंदर सिंह को अपना शासक मानने को तैयार नहीं थे तथा वे बराबर इसका प्रतिरोध कर रहे थे। सरकार की दूसरी मान्यता यह है कि औरंगजेब जसवंत सिंह के राज्य को शांतिपूर्ण आश्रित राज्य या साम्राज्य का नियमित सूबा बनाना चाहता था ताकि धार्मिक उत्पीड़न की नीति के प्रति हिंदुओं के प्रतिरोध को नेतृत्व प्राप्त ना हो सके। अतहर अली इस तर्क का भी खंडन करते हैं उनका मानना है की औरंगजेब का यही वास्तविक उद्देश्य होता तो उस लक्ष्य की पूर्ति अजीत सिंह को गद्दी प्रदान करने में अधिक होती। अजीत सिंह के सहयोगी मंदिरों को ध्वस्त करने तथा शरीयत को लागू करने के लिए तैयार थे जबकि इंदर सिंह ने इसके लिए कोई वादा नहीं किया था। अजीत सिंह इस समय एक छोटा सा बच्चा था। अगर मान भी लिया जाए कि औरंगजेब को अजीत सिंह के व्यक्तित्व की महानता के विषय में पूर्वाभास हो गया था तब भी यह स्पष्ट था कि कम से कम 15 वर्षों तक अजीत सिंह हिंदू प्रतिरोध का सफल नेतृत्व करने की स्थिति में नहीं था। अतहर अली ने इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं दिया कि शिशु होने पर भी वह शाही सत्ता के प्रति राठौड़ों के प्रतिरोध को वैधता प्रदान करने में सक्षम था तथा औरंगजेब इस स्थिति को नहीं आने देना चाहता था। मारवाड़ राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में अजीत सिंह साम्राज्य के लक्ष्यों में रुकावट डाल सकता था क्योंकि आगरा और अहमदाबाद का मुख्य मार्ग मारवाड़ होकर ही जाता था। मुगल सेना ने भी मुख्यतः इसी मार्ग का प्रयोग करती थी। यहां पर केवल यह तर्क देना पर्याप्त नहीं है कि औरंगजेब द्वारा इंदर सिंह को टीका बेचने का निर्णय करना परंपरा से हटकर नहीं था वह मुगल बादशाहों द्वारा पहले भी ऐसा किया जाता रहा। जहांगीर ने भी बीकानेर के उत्तराधिकार में हस्तक्षेप किया था वह आमेर की गद्दी पर मान सिंह के पुत्र महा सिंह के उत्तराधिकार के दावे को स्वीकार नहीं किया था। औरंगजेब द्वारा मारवाड़ के उत्तराधिकार में हस्तक्षेप ऐसे विकट दौर में किया जिसे सुलझा लेना उसके लिए और कठिन हो गया। औरंगजेब एक ओर उत्तर-पश्चिम सीमांत

Dr. Manish Shrimali

क्षेत्र तथा दूसरी ओर ढक्कन की गतिविधियों में पूरी तरह व्यस्त था इसके अलावा जाट विद्रोह की एक श्रंखला प्रारंभ हो चुकी थीं। अतहर अली के तर्कों में कोई ठोस आधार नहीं दिखाई पड़ता कि 1679 के राठौड़ विद्रोह का कारण राजपूतों की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा में ही निहित था।

मुगलों की राजपूतों के प्रति नीति समय एवं शासकों के साथ बदलती रही थीं। अकबर ने राजपूतों के साथ समन्वय आधारित जिस नीति के माध्यम से एक विस्तृत साम्राज्य का निर्माण किया था वह औरंगजेब तक आते-आते यह अब कुछ फायदेमंद प्रतीत नहीं हो रही थी। किंतु इसका तात्पर्य कतई यह नहीं था की अकबर ने मुगल साम्राज्य की स्थापना राजपूतों की सहायता से की थी तथा औरंगजेब ने उसकी सहायता न लेकर उसे नष्ट कर दिया। यह तो नहीं कहा जा सकता की औरंगजेब ने जानबूझकर राजपूतों से मैत्री संबंधों को समाप्त किया उसकी नीति अकबर से भिन्न अवश्य थी किंतु परिस्थितियों से भी प्रभावित थी 1679 की बदलती परिस्थितियों ने उसकी नीतियों में भी परिवर्तन ला दिया।

Dr. Manish Shrimali